International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor 5.401 Volume 6, Issue 5, May 2019
Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
Website-www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

त्रिलोचन के काव्य में ग्रामीण चेतना और लोक संस्कृति

डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
बलदेव साहू महाविद्यालय, लोहरदगा

सारांश

भारतीय संस्कृति की जनकेन्द्रीयता ने ही यहाँ के जटिल सामाजिक सम्बन्धें के मध्य एक दूसरे के प्रति प्रेम, सौहार्द तथा मानवीय आत्मगौरव की प्रतिष्ठा को बल प्रदान किया। भारतीय दृष्टिकोण से कहें तो मनुष्य और मनुष्येतर प्राणिमात्रा, प्रकृति और समस्त दृश्यमान जगत से मिलकर लोक का निर्माण होता है। भारतीय समाज में जनता के सांस्कृतिक विकास की एक दीर्घ परम्परा रही है। इस सांस्कृतिक परिसस्करण में हमने बहुत सारी जीवनाधृत मान्यताओं को अपनाया है तथा जो भी जीवन के सापक्ष नहीं रहा है, उसका त्याग किया है। अतः भारतीय जनजीवन का वर्तमान स्वरूप हमारी विभिन्न परम्पराओं, सांस्कृतिक व सामाजिक विकासचक्रों की एक दीर्घ परम्परा का प्रतिपफल है।

समाज के संचालन के लिए विभिन्न संस्कारों तथा सामाजिक विधि–विधानों का निर्माण भी इसी समाज में किया जाता है। ये संस्कार और विधिविधान दीर्घकालीन सामाजिक अनुभवों द्वारा प्रमाणित होते हैं।लोकजीवन के इन विविधरूपों से हमारा साहित्य गहरे अर्थों में प्रभावित होता है। साहित्य वस्तुतः इसी लोकजीवन की व्याख्या है। फलतः जीवन के सर्वाधिक अनुरंजक पक्षों को साहित्य के माध्यम से प्रभावपूर्ण बनाया जाता है। त्रिलोचन मूलतः रागात्मक संवेदना के कवि हैं। प्रेम, सौंदर्य, प्रकृति इनकी कविता के मुख्य विषय हैं। श्रेष्ठ प्रेम कविताओं का सृजन कवि की लखनी से हुआ है। संयम, तटस्थता, सांकेतिकता, कलात्मकता उसकी प्रेम कविताओं का वैशिष्ट्य है।

मुख्य शब्द :भारतीय संस्कृति, प्रेम, सौंदर्य, प्रकृति,संयम, तटस्थता,संस्कार

© **Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)**
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

हिन्दी कवियों में त्रिलोचन एक ऐसे कवि हैं जो बाजारवाद, पूँजीवाद और साम्राज्यवाद तीनों की खुलकर आलोचना करते हैं। शायद इसी कारण उनके यहाँ के किसान विपन्न होकर भी ओजस्वी रूप में हमारे सामने आते हैं क्योंकि वे पूँजी के सामने घुटने नहीं टेकते। भारत का किसान कभी बाजार के पीछे नहीं भागता है बल्कि उसकी उत्पादकता से आकर्षित होकर यूरोप के अनेकों बाजार स्वयं उसके द्वार पर आये थे। आज के दशकों पहले त्रिलोचन ने पूंजी और बाजार के द्वारा उत्पन्न वैश्विक प्रतिस्पर्धा के जिन खतरों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया था, हमें आज उन्हीं से दो–चार होना पड़ रहा है। त्रिलोचन अतीत के साथ वर्तमान को भी समृद्ध बनाते हैं। उनकी सम्पूर्ण कविता में मनुष्य की कहीं भी अनदेखी नहीं की गई है। भारतीय अर्थव्यवस्था प्राचीन काल से ही कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था रही है, अतः पशुप्रतिष्ठा यहाँ प्राचीनकाल से ही सामाजिक मान्यता के रूप में विद्यमान रही है।

त्रिलोचन के साहित्यिक संस्कारों में अपनी परंपरा से अधिकाधिक सीख लेने का भाव सर्वत्रा विद्यमान है तभी तो वे तुलसीदास के प्रति कहते हैं– ''तुलसी बाबा भाषा मैंने तुमसे सीखी।'' परम्परा से गहरे अर्थों में जुड़े होने के कारण ही त्रिलोचन का साहित्य हमारी चेतना के सांस्कृतिक तंतुओं को स्पन्दित करता है जिसके कारण हम जीवनरागों का आधन कर सकते हैं। त्रिलोचन का सौंदर्यबोध अत्यंत परिष्कृत है। चमक–दमक से रहित ये सहज सौंदर्य के पक्षपाती हैं। सादगी इनके सौंदर्य का मुख्य गुण है। भारतीय परंपरा के अनुरूप ही ये आकर्षण शक्ति पर विशेष ध्यान देते हैं, मादकता पर नहीं। जयशंकर प्रसाद जी की तरह ही नारी के बाह्य नहीं, आंतरिक सौंदर्य पर कवि की दृष्टि है। दया, ममता, उदारता, त्याग, सहनशीलता–स्त्री का वास्तविक सौंदर्य है जो कवि के काव्य में दिखाई देता है।

त्रिलोचन की कविता लोकजीवन से प्रत्यक्ष संवाद करती है। समाज की प्रत्येक घटना अपने अन्तस् में कुछेक निहितार्थ समाहित किए हुए रहती है। लोकजीवन के चितेरे साहित्यकार त्रिलोचन की दृष्टि अपेक्षाकृत अधिक सजग है। त्रिलोचन ने कविता में लक्षित सौन्दर्य के स्थान पर अलक्षित सौन्दर्य को विशेष महत्व प्रदान किया है। अतः त्रिलोचन के यहाँ ग्राम्यचित्राों का अलक्षित पक्ष वर्णित होता है। वे व्यक्ति के मुख से निकलने वाले शब्दों तथा उसके अन्तर्मन की भावनाओं के मध्य अन्तर करने वाले कवि हैं। लोकजीवन के प्रति त्रिलोचन की अगाधश्रद्धा थो। ग्राम्य समाज और जन जीवन के पति अपने लगाव का

जिक्र करते हुए वे कहते है कि– ''लोकजीवन का, जनपक्षीय जीवन का मुझे जो ज्ञान और अनुभव था जब वह देने लगा तो अनजाने में ही मैं नया हुआ। अवधी में रचना शुरु हुयी न! तो अवधी और हिन्दी में मैने अन्तर नहीं किया।''

उनकी कविता मनुष्य को केन्द्र में रखकर रची गयी हैं किन्तु कहीं पर भी उन्होंने वातावरण या प्रकृति की अनदेखी नहीं की हैं। वे ऐसा मानते रहे हैं कि परिवेश से भिन्न मनुष्य का अस्तित्व असम्भव है। अतः त्रिलोचन की कविता में आनुषंगिक तत्व भी महत्वपूर्ण बनकर हमारे सामने उपस्थित होते हैं। त्रिलोचन की कविताओं में आपको प्रकृति के प्रति उनके असीम अनुराग के दर्शन होंगे। उनके यहाँ प्रकृति के बिना सौन्दर्य की कोई परिकल्पना सम्भव नहीं है। त्रिलोचन बादलों को देखकर अपनी स्मृतियों को खो जाते हैं। उन्हें अपने गाँव खेड़े की याद आती है, वहाँ का सादा जीवन याद आता है। वहाँ के लोगों में चेतना की गुंजाइश का ध्यान हो आता है। ऐसा प्रतीत होता है कि त्रिलोचन ने प्रकृति को ही सौन्दर्य का सबसे बड़ा स्रोत माना है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि मनुष्य के पास सुन्दर कहने के लायक कुछ भी नहीं है।

कविता के लिए छंदसिद्धि को त्रिलोचन ने कभी अनिवार्य नहीं माना किन्तु उनकी कविताओं में एक सहज लयबद्धता के दर्शन होते हैं जो उनकी कविता को नवीन कलेवर प्रदान करते हैं। त्रिलोचन ने गाँव और शहर को कभी भी एक दूसरे का शत्रु नहीं माना। उन्हें ग्राम्य संस्कृति से सदैव लगाव रहा है, जो कभी खत्म नहीं हुआ। जीवन के अन्तिम क्षणों में भी उन्हें गाँव के अन्दाज में बात करते हुए तथा ग्रामीण जीवन शैली से युक्त जीवन जीते हुए देखा गया। त्रिलोचन की जीवनदृष्टि सर्वसाधरण व्यक्तियों के जीवन चरित्राों से निर्मित हाती है। इस समाज में निर्मलता और मलिनता के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। त्रिलोचन ने अवर्णनीय भावनाओं को उद्धृत करते हुए व्यक्ति के अन्तःकरण की निर्मलता को उसकी बाह्य शुचिता से अध्कि महत्व प्रदान किया है। त्रिलोचन की जीवनदृष्टि व्यक्ति की इसी निर्मलता को महत्व देती है। यही कारण है कि उन्होंने अपने काव्यपात्राों में कोई चारित्रिाक श्रेष्ठता का अति आग्रह आरोपित नहीं किया।

त्रिलोचन के लेखन में ग्राम्य–जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका है। समूचा ग्रामीण परिवेश उनकी कविताओं में मूर्त होता है। उनकी प्रकृति गाँव की सहज प्रकृति है जिसमें खेत, खलिहान, मटर, गेहूँ, जौ, सरसों, जलकुंभी पुरइन, पीपल, पाकड़, कटहल, नीम, बादल, हवा, चाँदनी,

दुपहरिया, संध्या और रात अपने मोहक सौंदर्य के साथ उपस्थित होता है। इस प्रकृति के साथ कवि का गहरा रिश्ता है। त्रिलोचन ने अपनी कविताओं में अपने को बड़े बेबाक ढंग से अभिव्यक्त किया है। इस दृष्टि से इनके श्उस जनपद का कवि हूँश तथा श्ताप के ताये हुए दिनाश संग्रह की कविताएँ महत्वपूर्ण हैं। अपने नाम, रूप, वेशभूषा, आत्मविश्वास, आस्था, आशावादिता, मस्ती, फक्कड़ता, दीनता, संघर्ष, अभावग्रस्त जीवन, चाल–ढाल–स्वभाव सब कुछ उनको कवि अपनी कविता में शब्द देता है। लोकजीवन के प्रति इसी अनुराग के कारण त्रिालोचन शास्त्राी ने स्वयं को जनपद का कवि बतलाया है।

त्रिालोचन ने सरकारी कुशासन की नब्ज पर प्रहार किया। सरकार की करनी तथा कथनी दोनों का फर्क पूरी स्पष्टता के साथ बयाँ कर दिया। समाधन के लिए जनता का समझदार होना आवश्यक है। त्रिालोचन के ग्राम्य चित्राों में व्यक्ति विचार और बुद्धि के अनेक स्तरों पर स्वतंत्रा रहता है किन्तु भावक्षेत्रा के प्रविष्ट होते ही उसकी सारी संवेदना उद्दीप्त हो जाती है। वह न चाहते हुए भी सबकी चिन्ता करता है। कविता में प्रकृति का मानवीकरण करने वाले कवियों की संख्या अपरिमित है किन्तु विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं की गतिशीलता में भावारोपण करते हुए, उससे संवाद करना त्रिालोचन की विशेषता है। उन्होंने काव्य जगत में प्रकृति की संचरणशील वृत्तियों पर अनेक कविताओं की सृष्टि की है। त्रिालोचन की कविताएँ इस बात की स्पष्ट प्रमाण हैं। अतएव उनके यहाँ सांस्कृतिक और धर्मिक महत्व रखने वाले वृक्षों की बड़ी प्रतिष्ठा है। उन्होंने जिस प्रकार से विभिन्न प्राकृतिक उपादानों को अपने काव्य का अवलम्बन बनाया है, उसमें सबसे विशिष्ट स्थान पर वृक्षों की प्रतिष्ठा की है– यह उनकी प्रकृति–दृष्टि की महत्ता का परिचायक है।

त्रिालोचन ने कृषक जीवन को सवेदनात्मक गहराई से पकड़ने का पयास अधिक किया है। त्रिालोचन जीवन में किसानों की भूमिका को सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। 'जीने की कला' काव्य संग्रह में एक कविता है, जिसका शीर्षक है– 'तभी लोग जीते हैं'। इस शीर्षक का अर्थावलम्बन भारतीय किसान है। उन्होंने संसार के संचालन में किसानों के द्वारा किए गये श्रम को प्रधान कारक माना है। त्रिालोचन ने यह ध्यान रखा है कि मनुष्य के भीतर मानवता का बोधि वृक्ष सदैव वर्धमान होता रहे। अतएव उन्होंने समस्त बाह्य घातों प्रतिघातों से उसकी रक्षा की है। यही कारण है कि वे परंपरा के जितने अधिक करीब रहते हैं। त्रिालोचन ने भारतीय संस्कृति के वैविध्य प्ण रूपों का दर्शन एवं, उनके एकत्वमूलक

गुणधर्मों का अनुशीलन करते हुए इस पमतत्व के दर्शन किए। सामाजिक भावना के विभिन्न स्तरों को संयोजित करने का सामर्थ्य इसी भाव में विद्यमान है। उनकी कविताओं के अनेक पात्र ग्राम्य धूलि से उठने वाले साधरण कृषक और निम्न मध्यवर्गीय परिवार के लोग हैं। समाज से मिलने वाली ज्ञानात्मक चेतना का समर्पण त्रिालोचन ने समाज के ही निमित्त कर दिया है। साहित्य के प्रति उनकी सच्ची प्रतिबद्धता ने उन्हें सत्यदृष्टि प्रदान की।

निष्कर्ष

अपनी धरती की सोंधी गंध से गहरे जुड़े त्रिलोचन की कविता लोक जीवन से सीधा साक्षात्कार करती है। प्रखर लोक चेतना कवि की कविता का सशक्त पक्ष है। कवि की कविता में देशीपन है, गाँव का खाटी संस्कार। लोक संवेदना, लोक संस्कृति, लोक परंपराओं, लोक ध्वनियों, बोलियों को कवि की कविता शब्दबद्ध करती है। त्रिलोचन के सघन, सरस, विविध प्रकार के अनुभवों को उनकी संपन्न भाषा बखूबी शब्दबद्ध करती है। अनुभूति और अभिव्यक्ति का संतुलन कवि की कविता का गुण है। उपेक्षित भाषा और उपेक्षित जीवन को आदर देने वाले त्रिलोचन की भाषा का भारतीयता और देशीपन से गहरा रिश्ता है। हिंदी की जातीय कविता के य प्रमुख कवि हैं। त्रिलोचन शब्द की मितव्ययता पर विशेष ध्यान देते हैं। कम शब्दों में अपने गझिन काव्यानुभव को ये सार्थक अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। इस प्रकार काव्यानुभूति और काव्यभाषा, दोनों ही स्तरों पर त्रिलोचन की कविता रेखांकित करने योग्य है। प्रेम, प्रकृति, सादर्य और लोक की प्रामाणिक उपस्थिति के साथ आम जनता के संघर्ष, उसकी वेदना को सशक्त शब्दों में अभिव्यक्त करने वाली इस कवि की कविता अपना विशेष स्थान रखती है। त्रिालोचन एकाकी रहने वाले कवियों में नहीं हैं। सामाजिकता तथा लोक निमग्नता उनकी वास्तविक पूँजी ह।त्रिालोचन का साहित्य रचनात्मकता एवं मूल्यांकनधर्मिता को नया स्वरूप पदान करता है।

सन्दर्भ सूची

- त्रिलोचन, दिगंत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006 ई
- त्रिलोचन, अरघान, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2015 ई
- त्रिलोचन, सबका अपना आकाश, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1987 ई
- त्रिलोचन, अमोला, नई किताब प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2018 ई
- त्रिलोचन, जीने की कला, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण प्रथम, 2004 ई
- मदनलाल शुक्ल, व्यक्तित्व निर्माण, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2009 ई
- शास्त्री त्रिलोचन, 'मेरा घर', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2002
- शास्त्री त्रिलोचन, 'जीने की कला', किताबघर पकाशन, दिल्ली, 2004